B. A. (Hons) Part I
Philosophy - Paper I
Topic - Jain theory of substance
Dr. Sachidanand Prasad.
R. R. S. College, Mokama.

(1)

जैन दर्शन के अनुसार प्रत्येक वस्तु के अनंत गुण होते है। इसमें कुछ गुण स्थाई होते है जबकि कुछ गुण अस्थाई होते है। जैन दर्शन मे कहा गया है कि स्थाई गुण वे है जो वस्तुओं मे निरन्तर विद्यमान रहते है और अस्थाई गुण वे है जो निरन्तर परिवर्तित होते रहते है। स्थाई गुण वस्तु के स्वरूप को निर्धारित करते हैं इसलिए उन्हे आवश्यक गुण भी कहा जाता है। उदाहरण के लिए मनुष्य का आवश्यक गुण चेतना है और सुख-दुःख इत्यादि अनावश्यक गुण है। इन गुणों का कुछ न कुछ आधार होता है और उसी आधार को द्रव्य या substance कहा जाता है। जैन दर्शन आवश्यक गुण को जो वस्तु के स्वरूप को निश्चित करता है "गुण" कहा है और अनावश्यक गुण को 'पर्याय' कहा है। जैन दर्शन मे द्रव्य की परिभाषा देते हुए कहा गया है कि जिसमें गुण और पर्याय हो वही द्रव्य है। जैन दर्शन के अनुसार द्रव्य की साधारण व्याख्या से उनका द्रव्य संबंधि विचार भिन्न है क्योंकि द्रव्य की साधारण व्याख्या के अनुसार आवश्यक गुणों के आधार को द्रव्य कहते है जबकि जैन दर्शन के अनुसार आवश्यक एवं अनावश्यक गुणों के आधार को द्रव्य कहा जाता है। यही कारण है कि जैन दर्शन में नित्यता और अनित्यता दोनो को

सत्य माना गया है। जैन दर्शन में द्रव्य का विभाजन दो वर्गों में किया गया है। ① अस्तिकाय ② अनास्तिकाय। जैन दर्शन में बतलाया गया है कि काल ही एक ऐसा द्रव्य है, जिसमें विस्तार नहीं है इसलिए काल के अतिरिक्त सभी द्रव्यों को अस्तिकाय कहा जाता है क्योंकि वे स्थान घेरते हैं। फिर अस्तिकाय द्रव्य का विभाजन जैन दर्शन में जीव और अजीव में किया गया है। जैन दर्शन में आत्मा को जीव कहा गया है और कहा गया है कि जीव का मूल लक्षण चेतना है क्योंकि चेतना जीव में सदैव विद्यमान रहती है। जैन दर्शन में बतलाया गया कि शरीर नाशवान है जबकि जीव नित्य है। जैन दर्शन के अनुसार जीव आकार विहिन है लेकिन शरीर आकारयुक्त है। फिर जीव ज्ञाता, कर्ता, भोक्ता इत्यादि है। जैन दर्शन का कहना है कि जीव में चार पूर्णताएँ पाई जाती है — अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत शक्ति और अनंत सुख। परन्तु जीव जब बंधन ग्रस्त हो जाते हैं तो उनके ये गुण अभिभूत हो जाते हैं। चूंकि जीव का अपना कोई आकार नहीं है और वह जिस शरीर में रहता है उसी के अनुसार आकार ग्रहण करता है इसलिए जैन दर्शन में जीव को "अस्तिकाय" द्रव्यों के वर्ग में रखा गया है। जैन दर्शन में अजीव तत्व चार प्रकार के होते हैं।

धर्म, अधर्म, पुद्गल एवं आकाश :

जैन धर्म दर्शन में धर्म और अधर्म का प्रयोग विशेष अर्थ में किया गया है। जैन दर्शन में कहा गया है कि वस्तुओं को चलायमान रखने के लिए सहायक द्रव्य की आवश्यकता पड़ती है। उदाहरण के लिए मछली जल में तैरती है। यदि जल न हो तो मछली का तैरना संभव नहीं है। अतः इस उदाहरण में गति के लिए जिस वस्तु की आवश्यकता होती है उसे 'धर्म' कहते हैं। यहाँ जल 'धर्म' है क्योंकि वह मछली की गति में सहायक है। जैन दर्शन के अनुसार किसी वस्तु को स्थिर रखने में जो सहायक होता है उसे 'अधर्म' कहा जाता है। उदाहरण के लिए कोई थका व्यक्ति वृक्ष की छाया में सो जाता है। यहाँ वृक्ष की छाया पथिक को आराम देने में सहायता प्रदान करती है। अतएव अधर्म उसे कहते हैं जो द्रव्यों के विश्राम और स्थिति में सहायक होता है। साधारणतः जिसे भूत (matter) कहा जाता है, उसे जैन दर्शन में 'पुद्गल' कहा जाता है। जैन दर्शन के अनुसार 'पुद्गल' या तो अणु (Atom) के रूप में दिखाई पड़ता है या स्कन्धों (compounds) के रूप में दिखाई पड़ता है। 'अणु' पुद्गल का वह अंश है जिसका विभाजन नहीं हो सके। जब हम किसी वस्तु का विभाजन करते हैं तो अंत में

एक ऐसी अवस्था आती है जहाँ विभाजन संभव नहीं होता है उसी अविभाज्य अंश को अणु कहते हैं। दो या दो से अधिक अणुओं के संयोजन को स्कन्ध कहते हैं। पुद्गल स्पर्श, रस, गन्ध और रूप जैसे गुणों से युक्त है। जैन दर्शन में शब्द को पुद्गल का गुण नहीं माना है बल्कि शब्द को स्कन्धों का आगन्तुक गुण माना है। जैन दर्शन के अनुसार आकाश उसे कहा जाता है जो धर्म, अधर्म, जीव और पुद्गल जैसे अस्तिकाय द्रव्यों को स्थान देता है। आकाश अदृश्य है इसलिए इसका ज्ञान अनुमान से होता है। जैन दर्शन के अनुसार आकाश दो प्रकार का होता है ① लोकाकाश ② अलोकाकाश। जैन दर्शन के अनुसार लोकाकाश में जीव, पुद्गल, धर्म और अधर्म निवास करता है। जैन दर्शन का कहना है कि अलोकाकाश जगत के बाहर है। जैन दर्शन में काल को अनस्तिकाय कहा गया है क्योंकि यह स्थान नहीं घेरता है। जैन दर्शन के अनुसार द्रव्यों के परिणाम (modification) और क्रियाशीलता (movement) की व्याख्या काल के द्वारा ही संभव है। वस्तुओं में जो परिणाम होता है उसकी व्याख्या के लिए "काल" को मानना पड़ता है। तथा "गति" की व्याख्या भी काल के द्वारा की जाती है। प्राचीन, नवीन, पूर्व, पश्चात इत्यादि भेदों की व्याख्या 'काल' के द्वारा की जाती है। काल दो प्रकार के होते हैं ① पारमार्थिक काल (Real time) और व्यवहारिक काल (Empirical Time)। क्षण, पल, घंटा मिनट इत्यादि व्यवहारिक काल हैं लेकिन पारमार्थिक काल नित्य है।